B.A. PART-1, PAPER-1
GEOGRAPHY (Hons.)

पृथ्वी की उत्पत्ति

Class - 3

DHARMESH NANDA
Assistant Professor (G)
Govt. Degree College, Bagaha
BRABU, Muzaffarpur

Date - 19/02/2022

ग्रहों की उत्पति में भाग लेने वाले तारों की संख्या के आधार पर द्वैतवादी वैज्ञानिक संकल्पना (Dualistic Concept)

चैम्बरलिन की ग्रहाणु परिकल्पना

(Planetesimal Hypothesis of Chamberlin) – 1905

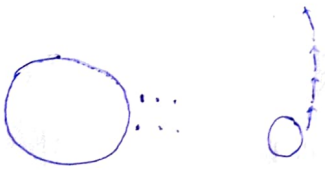

'निहारिका परिकल्पना' के विपरीत चैम्बरलिन ने सन् 1905 ई० में पृथ्वी की उत्पति के सम्बन्ध में अपनी 'ग्रहाणु परिकल्पना' प्रस्तुत की। इस परिकल्पना द्वारा न केवल पृथ्वी की उत्पति के विषय में ज्ञान प्राप्त होता है वरन् उसकी बनावट वायुमण्डल की उत्पति तथा महासागरों एवं महाद्वीपों की रचना के विषय में भी पर्याप्त जानकारी प्राप्त होती है।

'निहारिका परिकल्पना' के विपरीत चैम्बरलिन का विचार था कि पृथ्वी की रचना केवल उस एक निहारिका से नहीं हुई जिसका अवशिष्ट भाग सूर्य बना वरन् इसकी उत्पति दो बड़े तारों के सहयोग से हुई है। चैम्बरलिन के अनुसार प्रारम्भ में ब्रह्माण्ड में दो विशाल तारे थे। एक सूर्य था तथा दूसरा उसका साथी विशाल तारा।

ग्रह निर्माण के पूर्व, सूर्य तप्त एवं गैसपूर्ण नहीं था वरन् ओस कणों से निर्मित चक्राकार एवं शीतल था। ब्रह्माण्ड में घूमते हुए इस सूर्य तारा के पास एक विशालकाय तारा पहुंच गया। इस प्रकार पास आते हुए तारे की आकर्षण शक्ति के कारण सूर्य की धरातल से असंख्य छोटे-छोटे कण बाहर अलग हो गये। प्रारम्भ में मौलिक अवस्था में ये कण धूलि कण के रूप में थे इन बिखरे हुए कणों को 'ग्रहाणु' अथवा

इन्फिनिटिसिमल कहा जाता है। ब्रह्माण्ड में बिखरे हुए ग्रहाणुओं में कुछ ग्रहाणु अपेक्षाकृत बड़े आकार वाले थे। यही कुछ बड़े ग्रहाणु भावी ग्रहों के निर्माण के लिए केन्द्र भाग (nucleus) बने। इस प्रकार बड़े ग्रहाणुओं के चारों तरफ के छोटे-छोटे ग्रहाणुओं ने उनसे मिलकर वृहद रूप धारण करना प्रारम्भ कर दिया। फलस्वरूप असंख्य ग्रहाणुओं ने सम्मिलित होकर वृहद आकार में परिवर्तित होकर ग्रहों का रूप धारण किया

इस परिकल्पना के अनुसार सूर्य के धरातल के कणों के अलगाव का मुख्य कारण पास आने वाले तारे की ज्वारीय शक्ति को ही बताया जाता है।

प्रारम्भ में जब पृथ्वी की रचना अपनी प्रारम्भिक अवस्था में थी, उस समय सम्भवतः पृथ्वी पर कोई वायुमण्डल नहीं बना था, पर ज्यों-ज्यों पृथ्वी का आकार बढ़ता गया, इसने वायुमण्डलीय तत्वों को आत्मसात् करना प्रारम्भ कर दिया दो प्रमुख स्रोतों से मौलिक वायुमण्डल का निर्माण हुआ बताया जाता है। बाह्य उद्गम स्थान जब पृथ्वी का आकार अधिक बड़ा हो गया था तो उसने स्वतंत्र वायुमण्डलीय परमाणुओं को आत्मसात कर लिया। वायुमण्डलीय कणों की क्षति प्रारम्भ में अधिक तथा बाद में कम हो गयी क्योंकि अंत में आत्मसात् करने के लिए बहुत कम कण रहे होंगे।

आंतरिक उद्गम स्थान से वायुमण्डल के जलवाष्प, कार्बनडाईऑक्साइड तथा नाइट्रोजन जैसे प्राप्त हुई तथा बाह्य उद्गम स्थल से प्रायः सभी वायुमण्डलीय तत्व प्राप्त हुये। ऑक्सीजन ज्वालामुखी उद्गारों से प्राप्त होती है। इस प्रकार पृथ्वी की उत्पत्ति के समान ही उसके वायुमण्डलीय तत्वों का निर्माण भी धीरे-धीरे सम्भव हो सका।

पृथ्वी में ऊष्मा की उत्पत्ति भी पृथ्वी के आकार में क्रमशः वृद्धि के साथ-साथ ही हुई। पृथ्वी की ऊष्मा शक्ति कई साधनों द्वारा सम्भव हो सकी है, जब ग्रहाणुओं का समूहन हो रहा था उस समय ग्रहाणुओं के आपसी टकराव के फलस्वरूप ऊष्मा की उत्पत्ति हुई।

ज्यों - ज्यों ग्रहाणुओं का समूहन बढ़ता गया, केन्द्र भाग (nucleus) पर दबाव बढ़ता गया, जिस कारण तापक्रम में वृद्धि होने लगी। अंत में पृथ्वी के आंतरिक भाग में दबाव में वृद्धि के कारण अणुओं का पुनर्संगठन हुआ, जिससे अणु और अधिक घनत्व वाले हो गये तथा उष्णता बढ़ गयी। उपर्युक्त कारणों से पृथ्वी में पर्याप्त ऊष्मा की उत्पत्ति हो गयी जिससे ज्वालामुखी क्रिया के आविर्भाव से विभिन्न गैसें बाहर आकर वायुमण्डल के निर्माण में सहायक हुई।

जब वायुमण्डल में स्थित जलवाष्प सम्पृक्तावस्था (Saturation Point) में पहुंच गयी तो जलवृष्टि के फलस्वरूप सागरों का निर्माण प्रारम्भ हो गया। सम्भवतः सागरों का निर्माण पहले पृथ्वी के धरातल के नीचे प्रारम्भ हुआ तथा शनैः - शनैः ये तब तक बढ़ते गये जब तक कि ऊपरी सतह तक नहीं पहुंचे गये। ज्वालामुखी क्रियाओं द्वारा निर्मित छोटे - छोटे गर्तों में जल एकत्रित होने लगा। इस प्रकार निर्माण क्रिया के प्रारम्भिक काल में सागर अनेक झीलों के रूप में था तथा बाद में विस्तृत होकर एक दूसरे से मिलकर महासागर का रूप धारण किया। पुनः महासागरों तथा महाद्वीपों के विस्तार का मुख्य कारण अपक्षय बताया जाता है।

स्थलभाग में एसिड की वृद्धि के कारण स्थलीय पदार्थों का आपेक्षिक गुरुत्व कम होने लगा। दूसरे शब्दों में स्थलीय पदार्थों का भार कम होने लगा इस कारण जलमण्डल का तल ऊपर उठने लगा तथा स्थलभाग का निम्न भाग इससे जलमग्न हो गया। अब स्थलभाग का जलभाग की अपेक्षा विस्तार कम होने लगा। साथ ही साथ अत्यधिक जल के भार के कारण जलमण्डल की तली नीचे की ओर खिसकती गयी।

चैम्बरलिन के अनुसार महासागरों एवं महाद्वीपों का वर्तमान वितरण किसी निश्चित नियम के अनुसार सम्भव नहीं हुआ है चैम्बरलिन के अनुसार पृथ्वी के विकास की अवस्था में तीन मुख्य दशाएं पायी जाती हैं - (1) ग्रहाणुओं के संग्रह का समय, (2) ज्वालामुखी उद्गार का समय (3) वास्तविक भूगर्भिक काल (actual geological period)

मूल्यांकन

चैम्बरलिन ने अपनी 'ग्रहाणु परिकल्पना' द्वारा पृथ्वी की उत्पत्ति, उसकी संरचना, महासागरों तथा महाद्वीपों की उत्पत्ति तथा पर्वतों के निर्माण की समस्या को सुलझाने का भरसक प्रयत्न किया है। कुछ हद तक इस परिकल्पना से पृथ्वी के स्वभाव का आभास मिलता है फिर भी असमर्थ है।

(i) एक छोटी सी कुण्डलाकार निहारिका (Spiral nebula) से सम्पूर्ण सौर मण्डल की रचना कल्पना मात्र ही जान पड़ती है।

(ii) इस परिकल्पना के अनुसार ग्रहों का निर्माण अलग-अलग स्वतन्त्र रूप में हुआ है। इस प्रकार ग्रहों का एक नियमानुसार परिभ्रमण नहीं करना चाहिए। परन्तु इसके विपरीत सभी ग्रह एक निश्चित दिशा में सूर्य के चारों ओर घूमते हैं।

(iii) ग्रहाणुओं के संवर्धन एवं समूहन की क्रिया पूर्ण रूप से वर्णित नहीं की गयी है। समूहन द्वारा क्यों नौ ही ग्रह बने अधिक अथवा कम ग्रह क्यों नहीं बने?

(iv) यदि ग्रहों की रचना ग्रहाणुओं के संवर्धन से हुई मान ली जाय तो भी ग्रहों में उतना ही कोणीय आवेग नहीं हो सकता जितना कि इस समय उनमें है।

(v) इस विचारधारा के अनुसार ग्रह सदैव गैस थे परन्तु पृथ्वी प्रारम्भ काल में तरलावस्था में थी।

(vi) वायुमण्डल की रचना के विषय में यह परिकल्पना गलत धारणा प्रस्तुत करती है अतः वायुमण्डल ग्रहाणुओं द्वारा बना होना चाहिए। परन्तु यह भी सम्भव नहीं जान पड़ता।